



उत्तरकाशी जनपद के नृत्यगीतों में अनुष्ठान, उत्सव और पहचान: पांडव नृत्य, रासौ और तांदी के प्रकाशित विवरणों का स्रोत-आलोचनात्मक अध्ययन

आलोक नौटियाल¹, डॉ विपिन चंद्र²

¹ शोधार्थी, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, भारत

² अस्सिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, हुकुम सिंह बोरा महाविद्यालय सोमे वर अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जनपद की नृत्य-परंपराएँ—विशेषतः पांडव नृत्य, रासौ और तांदी—प्रायः लोकप्रिय लेखन में एक समरूप “लोक-संस्कृति” के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की जाती हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इस समरूपता की धारणा की जाँच करता है। इसके लिए 1997 से 2026 के बीच प्रकाशित मानवशास्त्रीय अध्ययनों, शोध-पत्रों, क्षेत्रीय हिंदी ग्रंथों और विशिष्ट आयोजनों की रिपोर्टों से उत्तरकाशी के नृत्यों से संबंधित 13 स्रोत-अभिलेख तैयार किए गए। प्रत्येक अभिलेख को स्थान, समय, प्रस्तोता, प्रमाण के प्रकार और गीत-पाठ की उपलब्धता के आधार पर वर्गीकृत किया गया और उनका तुलनात्मक विश्लेषण किया गया। अध्ययन से तीन निष्कर्ष निकलते हैं। पहला, जनपद में पांडव-परंपरा कम-से-कम तीन भिन्न रूपों में दर्ज है: बगोरी के जाड समुदाय का शब्दहीन अवतरण-अनुष्ठान, रैथल-दयारा में देव-डोली से जुड़ा प वा-नृत्य, और बंगान में बाडों द्वारा गाया जाने वाला महाकाव्य। इन्हें एक ही परंपरा मानने का प्रमाण उपलब्ध नहीं है। दूसरा, “रासौ” नाम का नृत्य स्रोतों में तीन भिन्न संदर्भों में आता है: शृंगारिक मेला-नृत्य, सेल्कू उत्सव में सोमे वर-पूजा और व्यापारियों की वापसी का रात्रि-नृत्य, और अंडूडी उत्सव में राधा-कृष्ण युगल के साथ पशुपालक उत्सव का नृत्य। तीसरा, तांदी विषय-श्रेणी नहीं, बल्कि एक प्रस्तुति-रूप है, जो उल्लास, प्रेम, देव-स्तुति और आपदा-स्मृति—सबका वाहक बनता है। अध्ययन यह भी दिखाता है कि उपलब्ध प्रकाशित सामग्री में नृत्यगीतों के पाठ अत्यंत कम हैं, और अधिकांश विवरण प्रस्तुति के अवसर तक सीमित हैं। शोध-पत्र का तर्क है कि उत्तरकाशी के नृत्यगीतों के अध्ययन में घाटी, समुदाय, समय और स्रोत-प्रकार को विश्लेषण की स्वतंत्र इकाइयों के रूप में रखना आवश्यक है।

मूलशब्द: उत्तरकाशी, गढ़वाली लोकसाहित्य, पांडव नृत्य, रासौ, तांदी, नृत्यगीत, प्रस्तुति-अध्ययन, स्रोत-आलोचना

प्रस्तावना

लोकसाहित्य के अध्ययन में गीत और नृत्य को प्रायः अलग-अलग विधाओं के रूप में देखा जाता रहा है। किंतु मध्य हिमालय की अनेक परंपराओं में गीत, वाद्य, नृत्य और अनुष्ठान एक ही प्रस्तुति के अंग हैं। उत्तराखण्ड के उत्तरकाशी जनपद में यह संबंध विशेष रूप से जटिल है, क्योंकि जनपद तीन भिन्न नदी-घाटियों—भागीरथी, यमुना (रवौई) और टौंस—में फैला है और इसमें गढ़वाली-भाषी समुदायों के साथ टौंस घाटी की भिन्न भाषिक परंपराएँ तथा जाड भोटिया समुदाय भी हैं (Bhatt *et al.* 2014 (Kandari, n.d.)।

इस विविधता के बावजूद उत्तरकाशी के नृत्यों पर उपलब्ध लेखन प्रायः नामों की सूची तक सीमित रहता है। एक ही नृत्य-नामक जैसे “पांडव नृत्य” या “रासौ” को पूरे जनपद की साझा परंपरा मान लिया जाता है, जबकि उसके स्थान, समुदाय, अवसर और प्रस्तोता पर ध्यान नहीं दिया जाता। परिणामस्वरूप भिन्न घाटियों और भिन्न समय के विवरण एक सामान्यीकृत चित्र में घुल-मिल जाते हैं।

प्रस्तुत शोध-पत्र इसी समस्या को संबोधित करता है। इसके तीन प्रश्न हैं

1. उत्तरकाशी के पांडव नृत्य, रासौ और तांदी के बारे में प्रकाशित स्रोत वास्तव में क्या प्रमाण देते हैं—किस स्थान, समय और प्रस्तोता के बारे में?
2. क्या एक ही नाम से वर्णित नृत्य-परंपराएँ विभिन्न स्रोतों में एक ही अर्थ-संदर्भ में आती हैं?
3. इन नृत्यों के साथ गाए जाने वाले गीतों के बारे में उपलब्ध प्रमाण कितना है, और उससे नृत्यगीतों के साहित्यिक अध्ययन की क्या संभावनाएँ और सीमाएँ बनती हैं?

यह अध्ययन क्षेत्रकार्य पर आधारित नहीं है। यह प्रकाशित सामग्री का स्रोत-आलोचनात्मक विश्लेषण है, जिसका उद्देश्य भावी क्षेत्रकार्य के लिए एक स्पष्ट प्रमाण-आधार और विश्लेषण-ढाँचा तैयार करना है।

साहित्य-समीक्षा

1. सैद्धांतिक आधार

लोकवार्ता-अध्ययन में बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में पाठ से प्रस्तुति की ओर एक निर्णायक बदलाव हुआ। डैन बेन-आमोस ने लोकवार्ता को छोटे समूहों के भीतर कलात्मक संप्रेषण के रूप में परिभाषित किया (Ben-Amos, 1971, p. 13)। रिचर्ड बाउमन ने इस दृष्टि को आगे बढ़ाते हुए तर्क दिया कि मौखिक कला का अर्थ उसके प्रस्तुति-संदर्भ—प्रस्तोता, श्रोता, अवसर और अपेक्षाओं—से बनता है (Bauman, 1977)। इस दृष्टि से नृत्यगीत का अध्ययन उसके पाठ के साथ-साथ उस सामाजिक क्षण का अध्ययन भी है जिसमें वह प्रस्तुत होता है।

परिवर्तन के अध्ययन के लिए हॉब्सबॉम और रेंजर का यह विचार प्रासंगिक है कि अनेक “परंपराएँ” नई परिस्थितियों में गढ़ी या पुनर्गठित होती हैं (Hobsbawm & Ranger, 1983)। भारतीय संदर्भ में रेडफील्ड का “महान” और “लघु” परंपरा का ढाँचा लंबे समय तक प्रभावी रहा (Redfield, 1956)। किंतु टौंस घाटी में दीर्घकालीन क्षेत्रकार्य करने वाले क्लॉस पीटर ज़ोलर ने इस ढाँचे पर आपत्ति की है। उनका तर्क है कि इस क्षेत्र की धार्मिक परंपराओं के अपने विशेषज्ञ और अपनी क्षेत्रीय प्रतिष्ठा है, इसलिए उन्हें किसी केंद्रीय परंपरा का “लघु” रूप कहना उचित नहीं (Bhatt *et al.*, 2014, p. 123)। प्रस्तुत अध्ययन इसी आपत्ति को अपने विश्लेषण का प्रारंभ-बिंदु बनाता है।

2. मध्य हिमालय में पांडव-परंपरा का अध्ययन

गढ़वाल की पांडव-लीला पर विलियम सैक्स का अध्ययन (sax, 2002) इस विषय का एक प्रमुख विवेचन है, किंतु वह उत्तरकाशी के बाहर के गढ़वाल पर केंद्रित है। उत्तरकाशी के संदर्भ में सुभद्रा मित्र चन्ना का बगोरी के जाड समुदाय पर अध्ययन (Channa, 2005) और ज़ोलर द्वारा संपादित बंगाण का मौखिक महाकाव्य पंडुवाण (Zoller, 2014) दो प्रमुख शोध-आधारित स्रोत हैं। चन्ना सैक्स द्वारा पहचाने गए पांडव-लीला के पाँच प्रमुख तत्वों—कूडोल, नृत्य, अस्त्र, गाथा-पाठ और भोज-आतिथ्य—की तुलना जाड-प्रस्तुति से करती हैं (sax, 2002, pp. 53–54) ~ cited in Channa, 2005, p. 75)।

3. क्षेत्रीय हिंदी लेखन

उत्तरकाशी पर उपलब्ध क्षेत्रीय हिंदी ग्रंथ नृत्य-नामों और उत्सवों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं (Mehra, 2007(Semwal, 2012; Sharma, 2008), किंतु उनमें प्रायः सर्वेक्षण-पद्धति या गीत-पाठ नहीं मिलते। सुरेन्द्र सिंह मेहरा का ग्रंथ जनपद के धार्मिक और पर्यटन-स्थलों के परिचय के क्रम में लोकनृत्यों और लोकगीत-रूपों की सूची देता है (Mehra, 2007, p. 29)। उमा रमन सेमवाल का गंगोत्री क्षेत्र पर अध्ययन ऐतिहासिक-सांस्कृतिक दृष्टि से ग्रामीण जीवन, स्त्रियों की स्थिति और उत्सवों का वर्णन करता है, किंतु अधिकांश विवरण भूतकाल में लिखे गए हैं (Semwal, 2012, pp. 147–154)। डी. डी. शर्मा का ग्रंथ पूरे उत्तराखण्ड के लोकोत्सवों का परिचय देते हुए उत्तरकाशी के सेल्कू उत्सव का विवरण देता है (Sharma, 2008, pp. 44–45)। ये ग्रंथ स्थानीय नामों, अवसरों और लोक-व्याख्याओं के अमूल्य अभिलेख हैं; उनकी सीमा यह है कि वे प्रायः यह नहीं बताते कि कोई कथन किस गाँव, किस वर्ष या किस सूचनादाता पर आधारित है। प्रस्तुत अध्ययन इसी कारण उनके कथनों को “जनपद-स्तर के विवरण” या “क्षेत्र-स्तर के विवरण” के रूप में दर्ज करता है। हाल के शोध-पत्र रवौई घाटी के अनुष्ठानों में वादक-गायक समुदायों की भूमिका (Chandra – Sonal, 2025) और गढ़वाली माँगल-गीतों (Rawat, 2023) पर प्रकाश डालते हैं।

4. शोध-अंतराल

उपर्युक्त साहित्य में दो अंतराल स्पष्ट हैं। पहला, उत्तरकाशी के विभिन्न नृत्य-विवरणों की तुलना स्थान, समय और स्रोत-प्रकार को अलग रखते हुए नहीं की गई है। दूसरा, यह आकलन नहीं किया गया है कि इन नृत्यों के गीत-पाठ प्रकाशित रूप में कितने उपलब्ध हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इन दोनों अंतरालों को संबोधित करता है।

शोध-प्रविधि

1. शोध-अभिकल्प

यह अध्ययन गुणात्मक दस्तावेजी विश्लेषण पर आधारित है। प्रकाशित स्रोतों को प्राथमिक आँकड़ों के रूप में नहीं, बल्कि विशिष्ट लेखकों द्वारा विशिष्ट समय पर किए गए अवलोकनों और कथनों के रूप में पढ़ा गया है। इसलिए प्रत्येक कथन को उसके स्रोत, समय और स्थान के साथ ही दर्ज किया गया।

2. स्रोतों का चयन

स्रोतों का चयन तीन मानदंडों पर किया गया:

1. स्रोत उत्तरकाशी जनपद के किसी स्थान या समुदाय के नृत्य या नृत्यगीत का विवरण देता हो।

2. विवरण किसी विशिष्ट स्थान और अवसर से जुड़ा हो, या स्रोत उत्तरकाशी के बारे में विधा-स्तर का स्पष्ट कथन करता हो।
3. स्रोत का संबंधित अंश लेखक द्वारा स्वयं पढ़ा गया हो।

व्यापक उत्तराखण्ड के पर्यटन-विवरण और ऐसी वेबसाइटें, जिनके स्रोत स्पष्ट नहीं थे, बाहर रखी गईं।

3. अभिलेख-निर्माण

चयनित स्रोतों से नृत्य से संबंधित 13 अभिलेख बनाए गए (तालिका 2)। प्रत्येक अभिलेख में निम्न विवरण दर्ज किए गए:

- स्थान और समुदाय;
- घटना, क्षेत्रकार्य और प्रकाशन की अलग-अलग तिथियाँ;
- प्रस्तोता;
- नृत्य का स्रोत-प्रयुक्त नाम;
- गीत या वाद्य का प्रमाण;
- प्रमाण का प्रकार—मानवशास्त्रीय विवरण, शोध-पत्र, क्षेत्रीय ग्रंथ, समाचार या पत्रिका-रिपोर्ट, अथवा अपठित प्रकाशन की ग्रंथसूची-जानकारी।

एक ही अनुष्ठान के दो स्रोत-विवरणों को एक अभिलेख के अंतर्गत भिन्न विवरण के रूप में रखा गया, ताकि उनकी गणना दो स्वतंत्र आयोजनों के रूप में न हो।

4. विश्लेषण

अभिलेखों का विश्लेषण तीन चरणों में किया गया:

1. प्रत्येक नृत्य-नाम के अंतर्गत आने वाले अभिलेखों की तुलना स्थान, अवसर, प्रस्तोता और अर्थ-संदर्भ के आधार पर की गई।
2. नृत्य और गीत के संबंध के प्रकार पहचाने गए।
3. निष्कर्षों को लिंग, सामाजिक भेद और परिवर्तन के आयामों पर परखा गया।

स्रोत का कथन और लेखक की व्याख्या पाठ में स्पष्ट रूप से अलग रखे गए हैं। इस अध्ययन में तुलना केवल तभी की गई है जब कम-से-कम दो तुलनीय विवरण उपलब्ध थे।

5. नैतिक पक्ष और सीमाएँ

अध्ययन किसी जीवित व्यक्ति से प्रत्यक्ष संवाद पर आधारित नहीं है, इसलिए सूचित सहमति का प्रश्न नहीं उठता। प्रकाशित गीत-पाठों के लंबे अंश पुनरुत्पादित नहीं किए गए हैं; विश्लेषण भावार्थ और पृष्ठ-संदर्भ पर आधारित है।

अध्ययन की तीन सीमाएँ हैं:

- प्रकाशित विवरण भिन्न समय (1997–2026) के हैं, इसलिए वे वर्तमान व्यवहार का प्रमाण नहीं हैं;
- कुछ स्रोत समाचार-रिपोर्ट हैं, जो आयोजक के कथनों पर आधारित हैं;
- नृत्यगीतों के पाठ अत्यल्प उपलब्ध हैं।

6. स्रोत-प्रकारों का मूल्यांकन

स्रोत-आलोचना का अर्थ स्रोतों को अस्वीकार करना नहीं, बल्कि यह पहचानना है कि प्रत्येक स्रोत किस प्रकार का कथन करने में समर्थ है। तालिका 1 इस अध्ययन के स्रोतों को उनके प्रकार के अनुसार वर्गीकृत करती है।

तालिका 1: स्रोत-प्रकार, उनकी क्षमता और सीमा

स्रोत-प्रकार	उदाहरण	किस प्रकार के कथन के लिए उपयुक्त	प्रमुख सीमा
मानवशास्त्रीय क्षेत्र-अध्ययन	Channa (2005); Bhatt <i>et al.</i> (2014)	अनुष्ठान-क्रम, सहभागिता, स्थानीय व्याख्या	विशिष्ट समय और समुदाय तक सीमित; लेखक की व्याख्या और सूचनादाता का कथन मिश्रित
संपादित मौखिक पाठ	Zoller (2014)	पाठ-आधारित विश्लेषण	इस अध्ययन में अपरामर्शित
क्षेत्रीय हिंदी ग्रंथ	Mehra (2007); Semwal (2012); Sharma (2008)	स्थानीय नाम, अवसर, लोक-व्याख्या	सर्वेक्षण-आधार और समय प्रायः अनिर्दिष्ट
शोध-पत्र (हाल के)	Chandra – Sonal (2025); Rawat (2023)	सामाजिक संरचना, विशिष्ट विधा	कुछ कथन सामान्यीकृत; संदर्भ-गुणवत्ता असमान
समाचार और पत्रिका-रिपोर्ट	Singh (2026); H. Panwar (2023); I. Panwar (2023); Rangar (2025)	विशिष्ट आयोजन की तिथि, स्थान, प्रस्तुति	आयोजक या एक सूचनादाता के कथन पर निर्भर
संस्थागत/ऑनलाइन लेख	Kandari (द.क.)	समुदाय-विशिष्ट विवरण	प्रकाशन-तिथि अज्ञात

स्रोत: लेखक द्वारा संकलित।

इस वर्गीकरण से एक व्यावहारिक नियम निकलता है: अनुष्ठान के आंतरिक क्रम के बारे में मानवशास्त्रीय विवरण को, किसी आयोजन की तिथि और प्रस्तुति के बारे में समकालीन रिपोर्ट को, और स्थानीय नामों के बारे में क्षेत्रीय ग्रंथों को प्राथमिकता दी गई है। जहाँ दो प्रकार के स्रोतों में विरोध था—जैसे बगोरी के अनुष्ठान के समय के बारे में—वहाँ किसी एक को सही घोषित करने के बजाय दोनों दर्ज किए गए हैं।

अध्ययन-क्षेत्र

उत्तरकाशी उत्तराखण्ड के गढ़वाल मंडल का सीमांत जनपद है। जनगणना 2011 के अनुसार इसकी कुल जनसंख्या 3,30,086 थी। जनपद के तीन सांस्कृतिक क्षेत्र इस अध्ययन के लिए प्रासंगिक हैं:

- **भागीरथी घाटी:** मुखबा, हर्षिल, बगोरी और रैथल-दयारा सहित;
- **यमुना घाटी का रवाँई क्षेत्र:** महासू, सोमे वर और पोखू जैसे देवताओं की पूजा के लिए जाना जाता है (Chandra & Sonal, 2025, p. 2);
- **टौंस घाटी:** इसमें बंगाण क्षेत्र टौंस और पबर नदी-घाटियों के बीच, हिमाचल प्रदेश की सीमा के निकट स्थित है (Bhatt *et al.*, 2014, p. 79, n. 3)।

बगोरी का जाड समुदाय मूलतः नेलांग-जादुंग क्षेत्र से संबंधित

है। 1962 के बाद इसका निवास-स्थान और आजीविका बदल गई (Kandari, n.d.; Channa, 2005)। चन्ना के अनुसार जाड समुदाय आंतरिक रूप से चियांग और फिबा समूहों में विभाजित है (Channa, 2005, p. 70), और भवेता कंडारी के अनुसार यह समुदाय हिंदू तथा बौद्ध—दोनों परंपराओं का पालन करता है (Kandari, n.d.)।

इन तीनों क्षेत्रों का धार्मिक भूगोल भिन्न है। भागीरथी घाटी में गंगा की डोली-यात्रा मुखबा से गंगोत्री तक जाती है, और मुखबा में सोमे वर देवता का काष्ठ-मंदिर है (Semwal, 2012, p. 154)। रवाँई में महासू, सोमे वर, पोखू, कपिल मुनि और कर्ण जैसे देवताओं की पूजा देव-डोली और मेलों के माध्यम से होती है (Chandra – Sonal, 2025, p. 2)। मेहरा के अनुसार सिंगतूर और पंचगाई पट्टी के कुछ भागों में दुर्योधन और कर्ण की पूजा होती है, और नैटवाड़ में पोखू देवता का एक-दिवसीय मेला लगता है (Mehra, 2007, pp. 28, 83)। बंगाण में महासू प्रमुख देवता हैं, जिनके आगमन की गाथा एक वार्षिक उत्सव में गाई जाती है (Bhatt *et al.*, 2014, pp. 81, 94)। महाभारत के पात्रों की पूजा—पांडवों के साथ कौरवों की भी—इस क्षेत्र की एक विशिष्टता है, जो पांडव-परंपरा के अध्ययन को और जटिल बनाती है।

विश्लेषण

1. अभिलेखों का सार

तालिका 2 इस अध्ययन में प्रयुक्त प्रमुख नृत्य-अभिलेखों का सार प्रस्तुत करती है। प्रत्येक पंक्ति एक स्रोत-अभिलेख है; एक स्थान की विशेषता दूसरे पर लागू नहीं की गई है।

तालिका 2: उत्तरकाशी के नृत्य संबंधी प्रमुख स्रोत-अभिलेख

अभिलेख	स्थान और अवसर	समय	नृत्य-नाम (स्रोत के अनुसार)	गीत/वाद्य का प्रमाण	स्रोत
क	बगोरी (जाड समुदाय), पानोह	क्षेत्रकार्य 1997–2000; जाड नवरात्रि (सितंबर)	"पांडव उतरना"	ढोल, भंगिमा; शब्द-पाठ नहीं	Channa (2005)
ख	बगोरी (जाड समुदाय)	अक्टूबर, दीपावली से पूर्व	पांडव नृत्य	ढोल; आवेश	Kandari (द.क.)
ग	दयारा बुग्याल (रैथल), अंडूडी	17 अगस्त 2023	पांडव नृत्य; राधा-कृष्ण वेश	ढोल-दमाऊ, भंकोर; अनुष्ठान-गीतों का उल्लेख	H. Panwar (2023)
घ	दयारा बुग्याल (पंचगाई पट्टी), अंडूडी	17 अगस्त 2026	रासौ-तांदी	ढोल-दमाऊ; लोकगीतों का उल्लेख	Singh (2026)
ङ	मुखबा, धराली, हर्षिल आदि, सेल्कू	भाद्रपद	रासौ	रात-भर नृत्य; लोकवाद्य	Sharma (2008); Mehra (2007)
च	गंगोत्री क्षेत्र के गाँव, मार्गशीर्ष की रात	भूतकालिक विवरण	तांदी, झुमेला; पांडव, बगड्वाल नृत्य	गीतों का उल्लेख	Semwal (2012)
छ	रवाँई के गाँव, मंगसीर बग्वाल	मार्गशीर्ष अमावस्या	तांदी, रासौ, पांडव नृत्य	गीतों का उल्लेख	A. Panwar (2023)

ज	मुखबा, राजकीय स्वागत	2025	रासो-तांदी	पाठ नहीं	Rangar (2025)
झ	बंगाण, महासू का उत्सव	फरवरी (वार्षिक)	पंडुवाण (महाकाव्य-गायन)	पूर्ण पाठ प्रकाशित	Zoller (2014)
ञ	बंगाण, बूढ़ी दिवाली	मार्गशीर्ष (दो रातों)	अलग घरे; मुखौटा-नृत्य	गीतों का उल्लेख	Bhatt <i>et al.</i> (2014)
ट	गंगोत्री क्षेत्र, पांडव नृत्य की भूमिकाएँ	भूतकालिक विवरण	पांडव नृत्य (द्रौपदी, गैण्डा घस्यारी, महाकाली की भूमिकाएँ)	कृ	Semwal (2012)
ड	रवाँई, डोली-यात्रा और जागर	2025 का शोध-पत्र	देव-नृत्य; जागर	ढोल-थाट; गाथा-गायन का उल्लेख	Chandra – Sonal (2025)
ट	उत्तरकाशी जनपद (सामान्य)	—	पांडव नृत्य; रासो (शृंगारिक); रवाँई में तांदी, छोपती, झुमैला, पैसारा, डोली नृत्य	विधा-नाम	Mehra (2007)

स्रोत: लेखक द्वारा संकलित। अभिलेख “ख” उसी अनुष्ठान का भिन्न स्रोत-विवरण है जिसका “क” है।

तालिका से स्पष्ट है कि तेरह में से केवल एक अभिलेख (“झ”) में गीत का पूर्ण पाठ प्रकाशित है, और वह भी इस अध्ययन में परामर्शित नहीं हो सका। शेष अभिलेख प्रस्तुति के अवसर, प्रस्तोता और संरचना का विवरण देते हैं।

2. पांडव-परंपरा के तीन रूप

2.1 बगोरी: शब्दहीन अवतरण

चन्ना का 1997–2000 के क्षेत्रकार्य पर आधारित अध्ययन उत्तरकाशी में पांडव-अनुष्ठान का सबसे विस्तृत विवरण है (Channa, 2005, p. 83)। जाड लोग इस अनुष्ठान को पानोह या “पांडव उतरना” कहते हैं, “लीला” नहीं (Channa, 2005, p. 76)। चन्ना के अनुसार इसका क्रम इस प्रकार है (Channa, 2005, च. 78–80):

- जाड नवरात्रि में खेतों से चुने दो कटू गेंडों के रूप में सजाए जाते हैं;
- पाँच दिन तक नृत्य, ढोल और भोज से उन्हें “जगाया” जाता है;
- छठे दिन पांडव अपने माध्यमों पर उतरते हैं;
- आठवें दिन गेंडों का वध होता है, जिसके बाद दुर्योधन के प्रतीक के रूप में एक बकरे की बलि होती है।

अनुष्ठान की कथा में भीम और हिडिम्बा के बच्चे—बबिका और बबिकी—अपने गेंडे चरा रहे होते हैं। पांडव उन्हें पहचाने बिना गेंडों को मार डालते हैं। प्रस्तुति में बच्चों की भूमिका निभाने वाले सचमुच रोते हैं, और दर्शकों में भी अनेक लोग रोते हैं (Channa, 2005, pp. 76–77)।

इस प्रस्तुति का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य उसकी शब्दहीनता है। चन्ना के अनुसार पूरा अनुष्ठान ढोल, भंगिमा और ध्वन्यात्मक उद्गारों से होने वाला मूकाभिनय है, जिसमें न शब्द बोले जाते हैं, न गाथा का पाठ होता है (Channa, 2005, p. 75)। सैक्स के पाँच तत्त्वों में से यहाँ अस्त्र केवल प्रतीकात्मक हैं और गाथा-पाठ अनुपस्थित है। चन्ना इसका संभावित कारण समुदाय की अपेक्षाकृत कमजोर मौखिक महाकाव्य-परंपरा में देखती हैं, पर स्वयं इसे अपुष्ट परिकल्पना कहती हैं (Channa, 2005, pp. 75–76)।

सहभागिता भी नियमित है। पूरा गाँव अनुष्ठान में सम्मिलित होता है, पर माध्यम वही बन सकते हैं जिनके कुलदेवता पांडव हैं; फिबा कहे जाने वाले समूह के लोग केवल दर्शक रहते हैं; और बलि का कार्य एक निम्न मानी जाने वाली जाति के व्यक्ति से कराया जाता है (Channa, 2005, pp. 70, 73, 78)। चन्ना यह भी दर्ज करती हैं कि 1960 के दशक से पहले के प्रत्यक्षदर्शी विवरणों में इस अनुष्ठान का उल्लेख नहीं मिलता, और वे इसे 1962 के बाद समुदाय की पहचान में आए परिवर्तन से जोड़ती हैं (Channa, 2005, pp. 73, 83)।

भवेता कंडारी भी बगोरी में पांडव नृत्य और पांडवों तथा द्रौपदी के आवेश का उल्लेख करती हैं, पर उसका समय अक्टूबर में दीपावली से पहले बताती हैं (Kandari, n.d.)। दोनों विवरणों के बीच समय का यह अंतर वर्ष-विशेष का है या अनुष्ठान में परिवर्तन का, यह स्रोतों से तय नहीं होता।

2.2 रैथल-दयारा: देव-डोली और प वा

2023 के अंडूडी उत्सव की एक रिपोर्ट के अनुसार सोमे वर देवता की डोली उठाने वालों ने डोली कंधों से उतारकर पांडव नृत्य किया। नृत्य करने वाले प वा चुने हुए लोग थे, जो ढोल-दमाऊ और भंकोर की ताल पर घरे में बारी-बारी से नाचे। आयोजक के अनुसार अनुष्ठान में गाए गए गीत प वाओं को आध्यात्मिक अवस्था में ले जाते हैं, और यह नृत्य कुलदेवता को स्वास्थ्य तथा फसल के लिए धन्यवाद देने का अनुष्ठान है (H. Panwar, 2023)। रिपोर्ट गीतों का पाठ नहीं देती।

बगोरी से इसकी तुलना करते समय चार अंतर स्वीकारने आवश्यक हैं:

- **समय:** 1997–2000 का क्षेत्रकार्य और 2023 की रिपोर्ट;
- **समुदाय:** जाड समुदाय और पंचगाई पट्टी के गाँव;
- **आयोजन:** कुलदेवता-आधारित नवरात्रि-अनुष्ठान और सार्वजनिक पशुपालक उत्सव;
- **स्रोत-प्रकार:** मानवशास्त्रीय अध्ययन और पत्रिका-रिपोर्ट।

इन सीमाओं के भीतर दोनों में देव-अवतरण समान है। अंतर यह है कि रैथल में गीतों का उल्लेख है, जबकि बगोरी में शब्द-पाठ का स्पष्ट अभाव है।

एक अन्य उल्लेखनीय तथ्य यह है कि 2023 के आयोजक के अनुसार सोमे वर की डोली उस वर्ष पहली बार इस उत्सव में आई थी (H. Panwar, 2023), जबकि 2026 की रिपोर्ट डोली के आगमन को उत्सव के सामान्य अंग के रूप में वर्णित करती है (Singh, 2026)। यह संकेत देता है कि इस पशुपालक उत्सव में देव-डोली और पांडव नृत्य हाल के वर्षों में जुड़े हो सकते हैं। किंतु एक आयोजक के कथन और एक समाचार-वर्णन से यह परिवर्तन प्रमाणित नहीं होता।

2.3 बंगाण: बाड़ों का महाकाव्य

टौंस घाटी के बंगाण क्षेत्र का पंडुवाण ज़ोलर द्वारा लगभग आठ घंटे की एक प्रस्तुति के प्रतिलेखन और अनुवाद के रूप में प्रकाशित है। प्रकाशकीय विवरण के अनुसार यह पांडवों और कौरवों के बीच वि व-प्रभुत्व के संघर्ष का गान है, जिसमें संस्कृत महाभारत में न मिलने वाले अनेक मोटिफ़ हैं, और जिसे पेशेवर बार्ड हर वर्ष फरवरी में महासू के उत्सव में गाते हैं (Zoller, 2014)।

जोलर एक अन्य शोध-पत्र में इसके एक प्रसंग का सार देते हैं। उसमें कुंती अनेक धातुओं की झीलों को छोड़कर दूध की झील में स्नान चुनती है, ताकि देवता उसे देवी की पुत्री कहें। जोलर के अनुसार यह मोटिफ हिमालय-हिंदूकुश की परी-कथाओं में व्यापक है (Bhatt *et al.*, 2014, p. 93)।

उपलब्ध विवरण में इस महाकाव्य के साथ नृत्य का उल्लेख नहीं है। इसलिए मौखिक महाभारत की उपस्थिति को यहाँ पांडव नृत्य का प्रमाण नहीं माना गया है।

2.4 तुलना

तालिका 3 तीनों रूपों की तुलना करती है।

तालिका 3: उत्तरकाशी में पांडव-परंपरा के तीन दर्ज रूप

आयाम	बगोरी (पानोह)	रैथल-दयारा	बंगाण (पंडुवाण)
प्रमुख माध्यम	शरीर और ढोल (मूकाभिनय)	पश्वा-नृत्य, ढोल-दमाऊ, भंकोर	बाडों का गायन
शब्द-पाठ	अनुपस्थित	गीतों का उल्लेख, पाठ अप्राप्त	पूर्ण पाठ प्रकाशित
अवसर	जाड नवरात्रि	अंडूडी (पशुपालक उत्सव)	महासू का उत्सव
केंद्रीय कथा-तत्त्व	गैंडों का वध और चरवाहे बच्चों का शोक	कुलदेवता को धन्यवाद (आयोजक का कथन)	विश्व-प्रभुत्व का संघर्ष (प्रकाशकीय विवरण)
स्रोत-प्रकार और समय	मानवशास्त्रीय अध्ययन, 1997-2000	पत्रिका-रिपोर्ट, 2023	संपादित पाठ, 2014 (प्रकाशन)

स्रोत: Channa (2005); H. Panwar (2023); Zoller (2014); Bhatt *et al.* (2014)।

तालिका से स्पष्ट है कि "पांडव नृत्य" शब्द तीन ऐसी प्रस्तुतियों को ढकता है जिनका माध्यम, अवसर और कथा-केंद्र भिन्न है। इन्हें एक ही परंपरा के संस्करण मानने के लिए कथा-पाठों और प्रस्तुति-क्रमों की प्रत्यक्ष तुलना आवश्यक होगी, जो उपलब्ध प्रकाशित सामग्री से संभव नहीं।

एक संकेत ऐसी तुलना की दिशा दिखाता है। उमा रमन सेमवाल गंगोत्री क्षेत्र के पांडव नृत्य में द्रौपदी, गैण्डा घस्यारी और महाकाली की भूमिकाएँ स्त्रियों द्वारा निभाए जाने का उल्लेख करती हैं (Semwal, 2012, p. 147)। "गै.डा" (गैंडा) का यह उल्लेख बगोरी की गैंडा-कथा से मेल खाता है; किंतु इस संक्षिप्त उल्लेख से दोनों का संबंध स्थापित नहीं होता।

3. रासौ: एक नाम, तीन संदर्भ

3.1 नाम-रूप

स्रोतों में इस नृत्य के लिए चार नाम-रूप मिलते हैं:

- "रासौ" (Sharma, 2008);
- "रासौ" (A- Panwar, 2023);
- "रासो" (Mehra, 2007);
- "रासौ-तांदी" या "रासो-तांदी" (Singh, 2026; Rangar, 2025)।

रवाँई की मंगसीर बग्वाल के विवरण में "तांदी" और "रासौ" अलग-अलग गिनाए गए हैं, पर उनका भेद नहीं बताया गया है (A. Panwar, 2023)। इसलिए उपलब्ध स्रोतों से यह तय नहीं होता कि रासौ तांदी का एक प्रकार है, उससे जुड़ा पर अलग नृत्य है, या दोनों नाम कभी-कभी एक ही प्रस्तुति के लिए प्रयुक्त होते हैं।

3.2 तीन अर्थ-संदर्भ

शृंगारिक मेला-नृत्य। मेहरा जनपद-स्तर पर रासो को शृंगारिक नृत्य के रूप में दर्ज करते हैं, जिसमें मेलों में स्त्री-पुरुष रंग-विरंगी पोशाक पहनकर भाग लेते हैं (Mehra, 2007, p. 29)।

सेल्कू: देव-पूजा और व्यापारियों की वापसी। डी. डी. शर्मा भागीरथी घाटी के सेल्कू उत्सव का वर्णन करते हैं, जो उनके अनुसार मुखबा, धराली, हर्षिल, सुक्की और झाला आदि गाँवों में मनाया जाता है। मुखबा, धराली और गंगोत्री क्षेत्र में इसका आयोजन भाद्रपद के अंतिम दिनों में होता है (Sharma, 2008, p. 44)। शर्मा "सेल्कू" का अर्थ "सो, गा कौन?" बताते हैं, क्योंकि इस अवसर पर रात-भर रासौ नृत्य होता है (Sharma, 2008, p. 44)। उनके अनुसार जानकार लोग इस उत्सव को

तिब्बत-व्यापार से लौटने वाले व्यापारियों की सकुशल वापसी से जोड़ते हैं, जब लोग अपने इष्टदेव सोमे वर की पूजा के साथ रात-भर नाचते-गाते थे। 1962 के बाद व्यापार की परंपरा टूट गई, पर उत्सव जारी है (Sharma, 2008, pp. 44-45)। मेहरा भी हर्षिल, मुखबा और झाला में भादों में सेल्कू मेले का उल्लेख करते हैं (Mehra, 2007, p. 83)। शर्मा के इसी विवरण में मकर संक्रांति का भी उल्लेख आता है, जो भाद्रपद की तिथि से मेल नहीं खाता; इसलिए यहाँ केवल वह कथन लिया गया है जिसकी पुष्टि मेहरा से होती है।

अंडूडी: पशुपालक उत्सव और कृष्ण। दयारा बुग्याल के अंडूडी उत्सव में पारंपरिक वेश में स्त्रियों ने राधा-कृष्ण के रूप में सजे युगल के साथ रासौ-तांदी किया और पुरुष भी उसमें सम्मिलित हुए। इससे पहले उसी युगल ने मक्खन से भरी मटकी फोड़ी थी, जिसके बाद लोगों ने दूध, दही और मक्खन से होली खेली (Singh, 2026)। 2023 की रिपोर्ट के अनुसार लोगों ने इस अवसर पर पशुओं के स्वास्थ्य के लिए कृष्ण का आभार व्यक्त किया (H. Panwar, 2023)।

3.3 विवेचन

ये तीन संदर्भ-शृंगार, देव-पूजा सहित व्यापार-चक्र, और पशुपालन-एक ही नृत्य-नाम के लिए अत्यंत भिन्न सामाजिक अर्थ प्रस्तुत करते हैं। अंडूडी में कृष्ण की उपस्थिति पशुपालन के अर्थ से जुड़ी है, जबकि सेल्कू में यही नृत्य सोमे वर और व्यापारियों की वापसी से जुड़ा है।

यहाँ एक पद्धतिगत सावधानी आवश्यक है। "रास" शब्द और अंडूडी में राधा-कृष्ण युगल की उपस्थिति से रासौ की ऐतिहासिक उत्पत्ति कृष्ण-रास से सिद्ध नहीं होती; सेल्कू और मंगसीर बग्वाल के रासौ-प्रसंगों में कृष्ण का कोई उल्लेख नहीं है। इस अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि "रासौ" नाम एक प्रस्तुति-रूप की ओर संकेत करता है, जिसका अर्थ अवसर से निर्धारित होता है। यह निष्कर्ष अवसरों के विवरण पर आधारित है, क्योंकि किसी भी स्रोत में रासौ के गीतों का पाठ उपलब्ध नहीं है।

4. तांदी: प्रस्तुति-रूप और स्मृति का वाहक

4.1 संरचना

रवाँई के स्थानीय लेखक महावीर रवाँला के विवरण के अनुसार तांदी अर्धवृत्ताकार नृत्य है, जिसमें आगे पुरुष और उनके बाद स्त्रियाँ जुड़ती हैं (Rangar, 2025 में उद्धृत)। उनके विवरण के अन्य मुख्य बिंदु ये हैं:

- पंक्ति लंबी होने पर वह घेरा बन जाती है;
- सबसे आगे का अनुभव व्यक्ति गीत और नृत्य का संचालन करता है;
- नृत्य गीत की गति और लय के अनुसार चलता है।

अंदूड़ी 2026 की रिपोर्ट में नृत्य का आरंभ स्त्रियाँ करती हैं (Singh, 2026)। किंतु नृत्य आरंभ करना और पंक्ति में स्थानकृये दो अलग बातें हैं, और रिपोर्ट पंक्ति के क्रम का उल्लेख नहीं करती। इसलिए इससे लैंगिक क्रम में परिवर्तन का निष्कर्ष नहीं निकाला गया।

सेमवाल गंगोत्री क्षेत्र के बारे में लिखती हैं कि मार्गशीर्ष मास से रात्रि में युवक-युवतियाँ पंचायती चौक, आँगन या ग्राम-देवता के चौक में एकत्र होकर तांदी और झुमेला गीत गाते थे (Semwal, 2012, p. 152)। यहाँ तांदी फसल के बाद के ऋतु-काल और युवा आयु-वर्ग से जुड़ी दिखती है।

4.2 विषय

रवांला तांदी के विषयों को चार समूहों में रखते हैं (Rangar, 2025 में उद्धृत):

- ऐतिहासिक या घटना-आधारित गीत;
- प्रेम और शृंगार;
- देवताओं, पौराणिक कथाओं और मेलों का बखान;
- शोक।

इससे स्पष्ट है कि तांदी विषय-श्रेणी नहीं, एक प्रस्तुति-रूप है। लोकगीतों के अवसर-आधारित वर्गीकरण—संस्कार, धार्मिक, प्रणय, ऋतु—के साथ इसे एक भिन्न अक्ष पर रखना आवश्यक है।

4.3 आपदा-स्मृति का पाठ

इस अध्ययन में तांदी का एकमात्र उपलब्ध पाठ-अंश 1978 की भागीरथी बाढ़ पर रचे गीत की दो पंक्तियाँ हैं, जो रवांला के विवरण के साथ प्रकाशित हुई हैं (Rangar, 2025)। तीन तिथियाँ अलग हैं: घटना 1978 की है; गीत की रचना-तिथि अज्ञात है; अंश 2025 में प्रकाशित हुआ।

लेख के दिए अर्थ के अनुसार दोनों पंक्तियाँ यह प्रश्न पूछती हैं कि डबराणी के पास जल-स्तर कैसे बढ़ने लगा और रतूड़ी का सेरा कैसे बहने लगा। सेरा नदी-तट की उपजाऊ, सिंचित भूमि है; सेमवाल इसे अव्वल श्रेणी की भूमि बताती हैं (Semwal, 2012, p. 150)।

उपलब्ध अंश की दो विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं

- **प्रश्नवाचक रूप:** शोक सूचना के रूप में नहीं, बल्कि विस्मय और आघात के प्रश्न के रूप में व्यक्त होता है।
- **घरेलू बिंब से आरंभ:** प्रत्येक पंक्ति का आरंभिक खंड एक घरेलू वस्तु—चूड़ी और थाली—से जुड़ा है, और घटना का वर्णन उसके बाद आता है।

ये निष्कर्ष केवल इन दो पंक्तियों तक सीमित हैं। रवांला के अनुसार 1980 के ज्ञानसू भूस्खलन और 1991 के भूकंप पर भी तांदी रचे गए, और ये गीत आज भी गाए जाते हैं (Rangar, 2025 में उद्धृत)। यदि स्थानीय पाठों से यह पुष्ट होता है, तो तांदी आपदा का एक सामुदायिक अभिलेख है—वह क्षति को उसी सामूहिक घेरे में दोहराता है जिसमें उत्सव मनाया जाता है।

5. मुखौटा और अनुष्ठानिक अतिक्रमण: बंगाण की बूढ़ी दिवाली
हिमाचल प्रदेश और उत्तराखण्ड के अनेक पर्वतीय क्षेत्रों में मैदानी दीपावली के लगभग एक मास बाद एक दूसरी “दिवाली” मनाई

जाती है। मेहरा उत्तरकाशी के संदर्भ में इसे “स्थानीय दीपावली” कहते हैं, जो मार्गशीर्ष में खेतों के कार्य से निवृत्त होने के बाद पहली दीपावली से अधिक धूमधाम से मनाई जाती है (Mehra, 2007, p. 82)। ज़ोलर के अनुसार बंगाण में यह दो रातों का पर्व है (Bhatt et al., 2014, p. 103):

- इसमें युवक और युवतियाँ नृत्य-स्थल पर अलग-अलग घेरों में नाचते हैं;
- वे मर्यादा का अतिक्रमण करने वाले गीत गाते हैं;
- मेढ़ा, सूअर, बैल और बकरे के मुखौटे पहने युवक पाताल-लोक के प्राणियों का रूप धरते हैं (टीजज मज स., 2014, च. 103, द. 75)।

उस समय परियों की उपस्थिति भी मानी जाती है।

यह प्रस्तुति तीन कारणों से उल्लेखनीय है

- **अतिक्रमण:** यह अनुष्ठानिक अतिक्रमण का उदाहरण है। सामान्य समय में वर्जित वाणी एक निश्चित रात और स्थान में अनुमत होती है।
- **लिंग-आधारित विभाजन:** इसमें युवक-युवतियों के अलग घेरे हैं, जो तांदी के संयुक्त पंक्ति वाले स्वरूप से भिन्न है।
- **बंद होना और लौटना:** ज़ोलर दर्ज करते हैं कि यह पर्व बाहरी दबाव के कारण कुछ वर्षों तक बंद रहा और फिर कुछ स्थानों पर “देवता की इच्छा” के नाम पर पुनः आरंभ हुआ (Bhatt et al., 2014, p. 103, n. 76)।

यहाँ परंपरा का पुनराारंभ देवता के अधिकार के माध्यम से वैध ठहराया गया है। यह दिखाता है कि परिवर्तन पर समुदाय का नियंत्रण धार्मिक भाषा में व्यक्त हो सकता है।

इन गीतों का पाठ स्रोत में नहीं है। इसलिए यह निर्णय संभव नहीं कि वे प्रणय-गीत हैं, व्यंग्य हैं या अनुष्ठानिक अश्लीलता की किसी परंपरा के अंग। इस अध्ययन में उन्हें “अनुष्ठानिक अतिक्रमण के गीत” कहा गया है—यह वर्णनात्मक संज्ञा है, विधा-निर्णय नहीं।

6. आवेश और गाथा: बगड़वाल नृत्य

सेमवाल गंगोत्री क्षेत्र में मार्गशीर्ष की रातों में पांडव नृत्य, दांगुड़ी नृत्य, बगड़वाल नृत्य, पवाड़े और जागर के आयोजन का उल्लेख करती हैं (Semwal, 2012, p. 152)। बगड़वाल नृत्य जीतू बगड़वाल की गाथा से संबंधित है। शिवानंद नौटियाल ने इस गाथा (पंवाड़े) का गढ़वाली पाठ और हिंदी रूपांतर प्रकाशित किया है (Nautiyal, 2024, pp. 205–215)। गाथा में जीतू अपनी बहन को धान की रोपाई के लिए बुलाने जाता है। मार्ग में “रैथल की थाती” पर मुरली बजाते हुए वह आँछरियों (परियों) को मोहित कर देता है, और अंततः रोपाई के दिन बैलों सहित खेत में उनके द्वारा हर लिया जाता है। नौटियाल के अनुसार गढ़वाल में इस पंवाड़े के साथ जीतू, भरुणा, शोभनी आदि की अतृप्त आत्माओं को प्रसन्न करने के लिए उन्हें नचाया जाता है (Nautiyal, 2024, p. 215)।

रमाकान्त बेंजवाल ऐसे गीतों को रांसा कहते हैं—देव-पूजन के वे गीत जिनके गाए जाने से देव-आवेश आता है। उनके अनुसार गढ़वाल में सिदुवा-बिदुवा और जीतू बगड़वाल जैसे पात्रों को देवता मानकर नचाने की प्रथा है (Benjwal, n.d., p. 62)।

इन तीन स्रोतों को साथ रखने पर एक ऐसी प्रस्तुति-परंपरा का संकेत मिलता है जिसमें गाथा का गायन पात्रों के “नचाए जाने”—अर्थात् आवेश—का साधन है। यह बगोरी के पानोह से भिन्न संरचना है:

- बगोरी में आवेश शब्दहीन है;

- बगड़वाल-परंपरा में आवेश गाथा के गायन से उत्पन्न बताया गया है।

यहाँ दो सीमाएँ हैं। पहली, नौटियाल का पाठ किस स्थान से संकलित है, यह स्पष्ट नहीं है, और पाठ में आया “रैथल” उत्तरकाशी का रैथल है या नहीं, यह भी स्रोत नहीं बताता। दूसरी, सेमवाल के

बगड़वाल नृत्य में यही पाठ गाया जाता है, यह किसी स्रोत में नहीं कहा गया। इसलिए यह संबंध एक परिकल्पना के रूप में प्रस्तुत है।

7. नृत्य-आयोजनों का ऋतु-चक्र

दर्ज नृत्य-आयोजनों को समय के अनुसार रखने पर कृषि-पशुपालन चक्र से उनका संबंध दिखता है (तालिका 4)।

तालिका 4: दर्ज नृत्य-आयोजनों का ऋतु-चक्र

समय	आयोजन	स्थान	कृषि-पशुपालन संदर्भ (स्रोत के अनुसार)	स्रोत
भाद्रपद	अंदूडी (रासौ-तांदी, पांडव नृत्य)	दयारा बुग्याल	बुग्याल से पशुओं की वापसी; दूध-मक्खन का अर्पण	Singh (2026); H. Panwar (2023)
भाद्रपद	सेल्कू (रासौ)	मुखबा, धराली, हर्षिल आदि	तिब्बत-व्यापार से वापसी (लोक-व्याख्या)	Sharma (2008); Mehra (2007)
आसुर/सितंबर (या अक्टूबर)	पानोह (पांडव उतरना)	बगोरी	खेतों से चुने कद्दू, चरवाहे बच्चों की कथा	Channa (2005); Kandari (n.d.)
मार्गशीर्ष	मंगसीर बगवाल / बूढ़ी दिवाली (तांदी, रासौ, पांडव नृत्य, मुखौटा-नृत्य)	रवाँई; बंगाण; उत्तरकाशी नगर	खेती के कार्य से निवृत्ति के बाद	A. Panwar (2023); Mehra (2007); Bhatt <i>et al.</i> (2014)
मार्गशीर्ष से (रातें)	तांदी-झुमेला; पांडव, बगड़वाल नृत्य	गंगोत्री क्षेत्र	फसल के बाद मेलों और त्योहारों की शुरुआत	Semwal (2012)
फरवरी	पंडुवाण का गायन	बंगाण	महासू का उत्सव	Zoller (2014)

स्रोत: तालिका में उल्लिखित।

तालिका से एक स्पष्ट प्रवृत्ति दिखती है: अधिकांश दर्ज नृत्य-आयोजन दो कालों में केंद्रित हैं।

- **भाद्रपद:** ऊँचे चरागाहों से पशुओं की वापसी का समय।
- **मार्गशीर्ष:** फसल-कार्य पूरा होने के बाद का समय। सेमवाल बताती हैं कि फसल को कोठारों में सँभालने के बाद ही गाँवों में मेलों और त्योहारों की शुरुआत होती थी (Semwal, 2012, p. 152), और मेहरा स्थानीय दीपावली को खेतों के कार्य से निवृत्ति से जोड़ते हैं (Mehra, 2007, p. 82)।

इस दृष्टि से नृत्य श्रम से विश्राम और श्रम के परिणाम—पशुधन की सुरक्षित वापसी और फसल—के उत्सव का माध्यम है। यह निष्कर्ष आयोजनों के समय पर आधारित है। गीतों के विषय भी इसी चक्र से जुड़े हैं या नहीं, इसके लिए पाठ आवश्यक होंगे।

8. नृत्यगीतों के पाठ की उपलब्धता

शोध-पत्र का तीसरा प्रश्न यह था कि उत्तरकाशी के नृत्यगीतों के पाठ प्रकाशित रूप में कितने उपलब्ध हैं। तालिका 5 इस प्रश्न का उत्तर अभिलेखों के आधार पर देती है।

तालिका 5: नृत्य-परंपराओं के गीत-पाठ की उपलब्धता

परंपरा	पाठ की स्थिति	स्थान	टिप्पणी
पंडुवाण (बंगाण)	पूर्ण संपादित पाठ प्रकाशित	Zoller (2014)	जर्मन अनुवाद सहित; इस अध्ययन में अपरामर्शित
पंडुवाण का कुंती-प्रसंग	प्रसंग-सार और एक पंक्ति का अनुवाद	Bhatt <i>et al.</i> (2014, p. 93)	मूल बंगाणी पाठ नहीं
तांदी (1978 की बाढ़)	दो पंक्तियाँ और हिंदी अर्थ	Rangar (2025)	गायक, गाँव और पूरा पाठ अज्ञात
जीतू बगड़वाल (बगड़वाल नृत्य से संबद्ध गाथा)	गढ़वाली पाठ और हिंदी रूपांतर	Nautiyal (2024, pp. 205–215)	संकलन-स्थान अनिर्दिष्ट; उत्तरकाशी-संबंध अपुष्ट
रासौ (सेल्कू अंदूडी, मेले)	कोई पाठ नहीं	—	केवल अवसर और नाम दर्ज
रैथल का पांडव नृत्य	कोई पाठ नहीं	—	अनुष्ठान-गीतों का केवल उल्लेख
बगोरी का पानोह	लागू नहीं	Channa (2005, p. 75)	प्रस्तुति शब्दहीन बताई गई है
बूढ़ी दिवाली (बंगाण)	कोई पाठ नहीं	—	गीतों का केवल उल्लेख
तांदी-झुमेला (गंगोत्री क्षेत्र)	कोई पाठ नहीं	—	भूतकालिक उल्लेख

स्रोत: लेखक द्वारा संकलित।

तालिका से स्पष्ट है कि उत्तरकाशी के नृत्यों के बारे में प्रकाशित ज्ञान अवसर और संरचना का ज्ञान है, शब्दों का नहीं। जिन दो परंपराओं के पूर्ण पाठ प्रकाशित हैं—पंडुवाण और जीतू बगड़वाल की गाथा—वे दोनों लंबी कथात्मक गाथाएँ हैं, सामूहिक नृत्य के छोटे गीत नहीं। रासौ और तांदी जैसे सामूहिक नृत्यगीत, जिनमें गाँव की सबसे बड़ी सहभागिता होती है, प्रकाशित साहित्य में लगभग अप्रलेखित हैं।

इस असंतुलन के दो संभावित कारण हैं। पहला, लोकसाहित्य के

संग्रहकर्ताओं ने परंपरागत रूप से लंबी गाथाओं को “साहित्य” के रूप में अधिक महत्व दिया है। दूसरा, सामूहिक नृत्यगीत प्रायः तात्कालिक, परिवर्तनशील और अवसर-विशेष से बँधे होते हैं, इसलिए वे स्थिर पाठ के रूप में कम संकलित होते हैं। ये कारण इस अध्ययन की व्याख्या हैं, किसी स्रोत का निष्कर्ष नहीं। किंतु इनका व्यावहारिक निहितार्थ स्पष्ट है: उत्तरकाशी के नृत्यगीतों का साहित्यिक अध्ययन मुख्यतः नए क्षेत्र-संकलन पर निर्भर करेगा, प्रकाशित सामग्री पर नहीं।

चर्चा

1. "एक परंपरा" की धारणा पर पुनर्विचार

विश्लेषण से स्पष्ट है कि उत्तरकाशी के नृत्य-नाम एक ही सांस्कृतिक वस्तु की ओर संकेत नहीं करते। "पांडव नृत्य" और "रासौ"—दोनों भिन्न घाटियों, भिन्न समुदायों और भिन्न अवसरों में भिन्न अर्थ धारण करते हैं। यह निष्कर्ष ज़ोलर की उस आपत्ति के अनुरूप है जिसमें वे इस क्षेत्र की धार्मिक परंपराओं को किसी "महान" परंपरा का स्थानीय रूपांतर मानने का विरोध करते हैं (Bhatt *et al.*, 2014, p. 123)। बंगाण की महाभारत में परी-कथा का मोटिफ और बगोरी के अनुष्ठान में चरवाहे बच्चों का शोक—दोनों दिखाते हैं कि पांडव-कथा स्थानीय विवास-जगत और आजीविका के अनुसार पुनर्गठित हुई है। इन्हें किसी एक केंद्रीय कथा का स्थानीय संस्करण कहना इनकी अपनी संरचना को अनदेखा करना होगा।

2. नृत्य और गीत का संबंध

प्रस्तुति-अध्ययन की दृष्टि से उपलब्ध प्रमाण नृत्य और गीत के संबंध के कम-से-कम चार प्रकार दिखाते हैं:

- **गीत-प्रधान सामूहिक नृत्य:** तांदी;
- **ताल-प्रधान अवतरण-नृत्य:** रैथल का पवा-नृत्य;
- **शब्दहीन अनुष्ठानिक मूकाभिनय:** बगोरी का पानोह;
- **मुखौटा-नृत्य:** बंगाण की बूढ़ी दिवाली (Bhatt *et al.*, 2014, p. 103, n. 75)।

ये परस्पर अलग श्रेणियाँ नहीं हैं; एक ही प्रस्तुति में गायन, वाद्य, मुखौटा और आवेश साथ आ सकते हैं। फिर भी यह भेद "नृत्यगीत" की अवधारणा के लिए महत्वपूर्ण है। बगोरी का उदाहरण दिखाता है कि हर नृत्य के साथ शब्द-गीत होना आवश्यक नहीं। लोकसाहित्य के अध्ययन में नृत्य को गीत का केवल साथी मानना उन प्रस्तुतियों को अदृश्य कर देता है जिनमें कथा शरीर और ताल से वहन होती है।

3. लिंग और सामाजिक भेद

उपलब्ध विवरणों में नृत्य की सहभागिता लिंग, कुल और सामाजिक समूह के आधार पर व्यवस्थित दर्ज है। बगोरी में अनुष्ठान का चरम द्रौपदी की माध्यम स्त्री का रक्त-रंजित होंठों के साथ प्रकट होना है। चन्ना के अनुसार जाड समुदाय में स्त्री और रक्तपात को विपरीत माना जाता है, इसलिए यही क्षण देवी के वास्तविक अवतरण का सबसे प्रबल प्रमाण बनता है (Channa, 2005, pp. 79–80)। इसी अनुष्ठान में सहभागिता कुल और समूह के आधार पर नियमित है (Channa, 2005, pp. 70, 73)।

रवाँई के संदर्भ में चंद्र और सोनल के अनुसार ढोल-दमरू बजाने वाले ढोली और गाथा-गायक बाजगी देव-अनुष्ठानों में अनिवार्य माने जाते हैं, पर सामूहिक भोज और गर्भगृह से दूर रखे जाते रहे हैं (Chandra – Sonal, 2025, pp. 7–9, 12–13)। गंगोत्री क्षेत्र के संदर्भ में सेमवाल इस संबंध को सेवा और पारिश्रमिक की व्यवस्था के रूप में दर्ज करती हैं। उनके अनुसार औजी वादकों को उनकी दैनिक पूजा और नौबत-सेवा के कारण सामूहिक अंशदान (फांट) से मुक्त रखा जाता था और दोनों फसलों पर अनाज (डडवार) दिया जाता था (Semwal, 2012, p. 147)।

इन तीन स्वतंत्र विवरणों में एक समान संरचना दिखती है: नृत्य-अनुष्ठान के लिए आवश्यक कुछ कार्य उन समूहों को सौंपे जाते हैं जिन्हें अनुष्ठान के केंद्र से दूर रखा जाता है। किंतु तीनों विवरण भिन्न समय और भिन्न प्रकार के हैं, और उनमें इन समूहों की अपनी आवाज़ बहुत सीमित रूप में दर्ज है।

4. परिवर्तन: पतन नहीं, पुनर्गठन

उपलब्ध विवरण परिवर्तन की कई दिशाएँ दर्ज करते हैं:

- बगोरी में पांडव-अनुष्ठान का 1960 के दशक के बाद अपनाया जाना (Channa, 2005, pp. 73, 83);
- अंडूड़ी में पर्यटन-समिति द्वारा आयोजन और देव-ढोली का संभवतः हाल में जुड़ना (H- Panwar, 2023; Singh, 2026);
- मुखबा में राजकीय स्वागत के लिए रासो-तांदी की प्रस्तुति (Rangar, 2025);
- सेल्कू का तिब्बत-व्यापार के अंत के बाद भी जारी रहना (Sharma, 2008, pp. 44–45);
- बंगाण में बूढ़ी दिवाली का बाहरी दबाव से बंद होना और फिर लौटना (Bhatt *et al.*, 2014, p. 103, n. 76)।

ये उदाहरण हॉब्सबॉम और रेंजर के इस विचार की पुष्टि करते हैं कि परंपराएँ नई परिस्थितियों में पुनर्गठित होती हैं (Hobsbawm – Ranger, 1983)। उत्तरकाशी के संदर्भ में परिवर्तन को "क्षरण" या "संरक्षण" के सरल द्वंद्व में नहीं पढ़ा जा सकता। कुछ परिवर्तन परंपरा को नए दर्शकों तक ले जाते हैं; कुछ उसके आर्थिक आधार के समाप्त होने पर भी उसे जीवित रखते हैं; और कुछ समुदाय की पहचान के नए दावे से जुड़े हैं।

5. प्रस्तुति-सिद्धांत की दृष्टि से

बाउमन के अनुसार प्रस्तुति में प्रस्तोता श्रोताओं के प्रति अपनी कुशलता का दायित्व स्वीकार करता है, और श्रोता उस कुशलता का मूल्यांकन करते हैं (Bauman, 1977)। उत्तरकाशी के उदाहरणों में यह दायित्व कई स्तरों पर बँटा है:

- **तांदी:** संचालक का दायित्व गीत आरंभ करना और पंक्ति को दिशा देना है (Rangar, 2025 में उद्धृत);
- **रैथल का पांडव नृत्य:** पवा का दायित्व देवता को "उतारना" है, और दर्शक ताली-सीटी से प्रतिक्रिया देते हैं (H. Panwar, 2023);
- **बगोरी:** बबिका-बबिकी बनने वाले जब सचमुच रोते हैं और दर्शक भी रोते हैं (Channa, 2005, pp. 76–77), तब प्रस्तुति की सफलता भावनात्मक सहभागिता से मापी जाती है।

किंतु इन अनुष्ठानिक प्रस्तुतियों में "कुशलता" का अर्थ कलात्मक दक्षता के साथ-साथ अनुष्ठानिक प्रामाणिकता भी है। चन्ना बताती हैं कि जाड समुदाय में देवता का "उतारना" किसी अवांछित आत्मा के "पकड़ने" से अलग समझा जाता है (Channa, 2005, p. 76)। द्रौपदी की माध्यम के रक्त-रंजित होंठ इसी प्रामाणिकता के प्रमाण माने जाते हैं (Channa, 2005, pp. 79–80)। इस प्रकार इन परंपराओं में प्रस्तुति का मूल्यांकन सौंदर्यात्मक के साथ धार्मिक मानदंडों पर भी होता है। लोकसाहित्य के अध्ययन में आवेश को समुदाय की धार्मिक समझ के भीतर ही पढ़ना आवश्यक है; उसे केवल "अभिनय" या केवल "विवास" कहना प्रस्तुति के इस दोहरे स्वरूप को अनदेखा करता है।

6. लोकगीत-वर्गीकरण के लिए निहितार्थ

हिंदी लोकसाहित्य के अध्ययनों में लोकगीतों का वर्गीकरण प्रायः अवसर या विषय पर आधारित होता है—संस्कार, धार्मिक, प्रणय, ऋतु और विविध गीत। उत्तरकाशी के उदाहरण इस वर्गीकरण की एक सीमा दिखाते हैं।

स्थानीय विधा-नाम प्रायः प्रस्तुति-रूप से बने हैं: तांदी, रासौ, झुमैला, छोपती। मेहरा उत्तरकाशी के लोकगीत-रूपों में मंगल, पूजन, थड्या, झुमैला, बसंत, बाजबंद, खुदेड़, चौफुला, चौती और बारामासी गीतों को एक ही सूची में गिनाते हैं (Mehra, 2007, p. 29)। इस सूची में अवसर-आधारित नाम (मंगल, पूजन), ऋतु-आधारित नाम (बसंत, चौती, बारामासी), भाव-आधारित नाम

(खुदेड़) और प्रस्तुति-आधारित नाम (थड्या, झुमैला, चौफुला) एक साथ हैं।

इसलिए इस अध्ययन का प्रस्ताव है कि उत्तरकाशी के गीतों को कम-से-कम दो स्वतंत्र अक्षों पर दर्ज किया जाए:

1. स्थानीय विधा या प्रस्तुति-रूप;
2. विषय या अवसर।

इस प्रकार आपदा पर रचा तांदी प्रस्तुति-रूप से तांदी और विषय से आपदा-गीतकृदोनों होगा, और उसकी गणना दो बार नहीं होगी। यह द्वि-अक्षीय ढाँचा शोध-सारांशों में प्रचलित एक-अक्षीय वर्गीकरण की तुलना में स्थानीय परंपरा के प्रति अधिक संवेदनशील है।

निष्कर्ष

यह शोध-पत्र उत्तरकाशी जनपद के पांडव नृत्य, रासौ और तांदी के प्रकाशित विवरणों का स्रोत-आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके चार निष्कर्ष हैं।

1. पांडव-परंपरा के भिन्न रूप। जनपद में पांडव-परंपरा कम-से-कम तीन भिन्न रूपों में दर्ज है, जिनका माध्यम, अवसर और कथा-केंद्र भिन्न है; इन्हें एक परंपरा मानने का प्रमाण उपलब्ध नहीं है।
2. रासौ के भिन्न अर्थ। “रासौ” नाम शृंगार, देव-पूजा सहित व्यापार-चक्र और पशुपालक उत्सवकृतीन भिन्न संदर्भों में आता है। इसका अर्थ अवसर से निर्धारित होता है, नाम से नहीं।
3. तांदी एक प्रस्तुति-रूप। तांदी विषय-श्रेणी नहीं, प्रस्तुति-रूप है। उपलब्ध एकमात्र पाठ-अंश उसे आपदा-स्मृति के वाहक के रूप में दिखाता है।
4. ऋतु-चक्र से संबंध। दर्ज नृत्य-आयोजन मुख्यतः भाद्रपद (पशुओं की वापसी) और मार्गशीर्ष (फसल के बाद) में केंद्रित हैं, जो नृत्य को श्रम-चक्र के उत्सव से जोड़ता है।
5. गीत-पाठों का अभाव। प्रकाशित सामग्री में उत्तरकाशी के नृत्यगीतों के पाठ अत्यल्प हैं। अधिकांश ज्ञान प्रस्तुति के अवसरों तक सीमित है, गीतों के शब्दों तक नहीं।

पद्धति के स्तर पर शोध-पत्र दो प्रस्ताव करता है: लोकगीतों का द्वि-अक्षीय वर्गीकरण (प्रस्तुति-रूप और विषय), और यह कि उत्तरकाशी के नृत्यगीतों के अध्ययन में घाटी, समुदाय, समय और स्रोत-प्रकार को विश्लेषण की स्वतंत्र इकाइयों के रूप में रखना आवश्यक है। भिन्न विवरणों को जोड़कर बनाया गया सामान्यीकृत चित्र प्रमाण का नहीं, लेखन की सुविधा का परिणाम होगा।

1. सीमाएँ और भावी शोध

यह अध्ययन प्रकाशित स्रोतों पर आधारित है। इसके कुछ अभिलेख समाचार-रिपोर्टें हैं, और भिन्न अभिलेख भिन्न दशकों के हैं। पंडुवाण का पूर्ण प्रकाशित पाठ इस अध्ययन में परामर्शित नहीं हो सका। भावी शोध के लिए तीन दिशाएँ प्रस्तावित हैं:

1. गीत-पाठों का संकलन। मुखबा, रैथल और रवाई के गाँवों से सहमति-सहित रिकॉर्डिंग और प्रतिलेखन, ताकि रासौ और तांदी का पाठ-आधारित अध्ययन संभव हो।
2. बगोरी के अनुष्ठान का पुनः अध्ययन। चन्ना के विवरण के लगभग 25 वर्ष बाद पानोह का प्रलेखन, ताकि परिवर्तन की दिशा प्रमाण के आधार पर जानी जा सके।
3. कथा-तुलना। पंडुवाण के प्रकाशित पाठ और गंगोत्री क्षेत्र के पांडव नृत्य की भूमिकाओं की तुलना। इसमें “गैण्डा घस्यारी” जैसी भूमिकाओं के माध्यम से बगोरी की गैण्डा-कथा के संभावित संबंध की जाँच की जा सकती है।

घोषणाएँ

हितों का टकराव: लेखकों के बीच कोई हितों का टकराव नहीं है।

वित्तपोषण: इस अध्ययन के लिए किसी संस्था से वित्तीय सहायता प्राप्त नहीं हुई। ख्यदि कोई छात्रवृत्ति/फेलोशिप है तो उल्लेख करें।

ऑकड़ों की उपलब्धता: इस अध्ययन में प्रयुक्त सभी स्रोत संदर्भ-सूची में दिए गए हैं। अभिलेख-तालिका का विस्तृत रूप अनुरोध पर लेखक से प्राप्त किया जा सकता है।

नैतिक अनुमोदन: अध्ययन प्रकाशित सामग्री पर आधारित है और इसमें मानव-प्रतिभागियों से प्रत्यक्ष संवाद नहीं हुआ; इसलिए नैतिक अनुमोदन की आवश्यकता नहीं थी।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग की घोषणा: इस पांडुलिपि की स्रोत-संकलन और प्रारूप-लेखन प्रक्रिया में कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सहायक उपकरण का उपयोग किया गया। लेखकों ने सभी स्रोतों, उद्धरणों और निष्कर्षों की जाँच की है और सामग्री की पूर्ण जिम्मेदारी लेते हैं। ख्यत्रिका की नीति के अनुसार इस घोषणा का शब्दांकन समायोजित करें।

संदर्भ-सूची

1. Bauman R. Verbal art as performance. Newbury House , 1977.
2. Ben-Amos D. Toward a definition of folklore in context. The Journal of American Folklore, 1971;84(331):3-15. <https://doi.org/10.2307/539729>
3. Benjwal R. (n.d.). गढ़वाली भाषा: इतिहास, व्याकरण एवं शब्द संपदा. विनसर पब्लिशिंग कं.
4. Bhatt R P, Wessler H W, Zoller C P. Fairy lore in the high mountains of South Asia and the hymn of the Garhwali fairy ‘Daughter of the Hills’. Acta Orientalia, 2014;75:79-166.
5. Chandra S, Sonal J. Caste, culture, and ritual hierarchies: A historical study of marginalised communities in the religious landscape of Rawain Valley in Uttarkashi District of Uttarakhand. Journal of Historical, Archaeological and Anthropological Studies, 2025;3(1-2):1-22.
6. Channa S M. The “descent of the Pandavas”: Ritual and cosmology of the Jads of Garhwal. European Bulletin of Himalayan Research, 2005;28:67-87.
7. Hobsbawm E, Ranger T. (Eds.). The invention of tradition. Cambridge University Press, 1983.
8. Kandari S. (n.d.). The Jadh Bhotiya community of Bagori village. Sahapedia. Retrieved September 30, 2026, from <https://www.sahapedia.org/jadh-bhotiya-community-bagori-village>
9. Mehra S S. उत्तरकाशी के धार्मिक एवं पर्यटन स्थल (2nd rev. ed.). तक्षशिला प्रकाशन, 2007.
10. Nautiyal S. (2024). उत्तराखण्ड की लोकगाथाएँ. अल्मोड़ा बुक डिपो.
11. Panwar A. (2023, November 24). Tradition of Bagwal festival in U’khand. Garhwal Post. <https://garhwalpost.in/tradition-of-bagwal-festival-in-ukhand/>
12. Panwar H. (2023, August 28). Did you know about the unique ‘Pandava Nritya’ of Uttarakhand? Outlook Traveller.

- <https://www.outlooktraveller.com/experiences/heritage/did-you-know-about-the-unique-pandava-nritya-of-uttarakhand>
13. Rangar A. (2025, April 9). पहाड़ का लोकनृत्य 'तांदी'... जिसके गोल घेरे में जल-जमीन, हंसी-खुशी, आपदा-विपदा सब समा जाते हैं. Aaj Tak. <https://www.aajtak.in/art-and-culture/folk-art/story/tandi-folk-dance-of-the-mountains-garhwal-uttarakhand-in-whose-circular-circles-water-land-laughter-happiness-disaster-calamity-all-get-contained-ntcpvp-dskc-2211854-2025-04-09>
 14. Rawat P B. Elements of ethno-medical importance in Garhwali Maangal songs. *Journal of Mountain Research*,2023;18(2):265–272. <https://doi.org/10.51220/jmr.v18i2.28>
 15. Redfield R. Peasant society and culture: An anthropological approach to civilization. University of Chicago Press ,1956.
 16. Sax W S. Dancing the self: Personhood and performance in the Pandav Lila of Garhwal. Oxford University Press ,2002.
 - 17^ण Semwal U R. श्री गंगोत्री तीर्थ क्षेत्ररू ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन. अभिनव प्रकाशन.
 18. Sharma D D. उत्तराखण्ड के लोकोत्सव एवं पर्वोत्सव (2nd ed.). अंकित प्रकाशन, 2008.
 19. Singh A P. (2026, August 18). Butter Festival celebrated with traditional fervour in Dayara Bugyal. Garhwal Post. <https://garhwalpost.in/butter-festival-celebrated-with-traditional-fervour-in-dayara-bugyal/>
 20. Zoller C P. Die Panduan: Ein mündliches Mahabharata-Epos aus dem Garhwal-Himalaya ,2014. (Neuindische Studien, Vol. 16). Harrassowitz. <https://doi.org/10.2307/j.ctvc2rmwh>